लिंगभेद और इस्लाम

लेखक

डॉ॰ फ़ज़लुर्रहमान फ़रीदी

अनुवादक

नौशाद अहमद

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

"अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।"

दो शब्द

जिस तरफ़ देखिए आज स्त्री-स्वतंत्रता और स्त्रियों के अधिकारों की चर्चा ज़ोर-शोर के साथ की जा रही है। स्त्रियों को पुरुषों के समान लाकर खड़ा करने के लिए बाक़ायदा आन्दोलन चलाए जा रहे हैं। अनेक महिला सन्गठन स्त्रियों की स्वतन्त्रता, बराबरी और अधिकारों का माँग को लेकर अपना परचम बुलन्द किए हुए हैं। महिलावादी सन्गठनों की सोच है कि स्त्रियाँ अधिकारों और समानता के मामले में पुरुषों से बहुत पिछड़ी हुई हैं इसलिए यह ज़रूरी हो गया है कि स्त्रियों के अधिकारों के लिए और उनके साथ हो रही नाइनसाफ़ी के ख़िलाफ़ एक लड़ाई लड़ी जाए। ग़ौर करनेवाली बात यह है कि अधिकारों की इस लड़ाई में कर्त्तव्यों को पूरी तरह अनदेखा कर दिया गया है। जिसका परिणाम यह हुआ है कि स्त्री और पुरुष दो वर्गों में बँट गए हैं और एक दूसरे के परस्पर विरोधी वर्ग के रूप में सामने आ रहे हैं। यह स्थिति स्त्री-पुरुष के बीच भेदभाव को बढ़ावा दे रही है। इस सबके पीछे पाश्चात्य सभ्यता का हाथ है जिसने लिंगभेद को बढ़ावा देने का काम किया है।

वास्तविकता यह है कि पाश्चात्य सभ्यता मानवता को विभाजित करनेवाली सोच रखती है और इसी दिशा में काम भी करती है। जहाँ एक ओर पाश्चात्य सभ्यता भेदभाव को बढ़ावा देने का काम करती है वहीं स्त्रियों के लिए अधिकारों की जंग छेड़ने की भी हिमायत करती है। इस पुस्तिका में लेखक डॉ॰ फ़ज़लुर्रहमान फ़रीदी ने बहुत मज़बूती के साथ इस पक्ष को उजागर किया है कि नारी-मुक्ति और स्त्री अधिकरों की लड़ाई की आड़ में पाश्चात्य सभ्यता ने किस प्रकार लिंगभेद को बढ़ावा दिया है और स्त्री-पुरुष दोनों को उनके अधिकारों के मामले में अन्याय का शिकार बना दिया है। नारी-मुक्ति की इस लड़ाई में कैसे

स्त्री को बाज़ार और उपभोग की वस्तु बना दिया है और किस तरह नारी की स्वतंत्रता के नाम पर उसका अपमान किया जाता है। योग्य लेखक ने स्त्री-पुरुष को लेकर इस्लामी सोच के विभिन्न पहलुओं को भी बड़ी ख़ूबसूरती के साथ प्रस्तुत किया है। इस पुस्तिका में स्पष्ट किया गया है कि इस्लाम लिंगभेद और किसी भी प्रकार से मानवता के विभाजन का घोर विरोधी है। इस्लाम स्त्रियों को सम्मान देने की वकालत करता है और स्त्री-पुरुष के आधार पर भेदभाव नहीं करता है।

यह पुस्तिका लिंगभेद को लेकर इस्लामी दृष्टिकोण को स्पष्ट करने का एक ख़ूबसूरत प्रयास है। इस पुस्तिका में लिंगभेद पर विस्तार से चर्चा करना सम्भव नहीं था इसलिए यहाँ केवल इसकी एक छोटी सी झलक ही प्रस्तुत की जा रही है। इस विषय पर और अधिक विस्तार से जानने के लिए हमारे प्रकाशन की अन्य पुस्तकों का अध्ययन किया जा सकता है।

-प्रकाशक

लिंगभेद और इस्लाम

पाश्चात्य सभ्यता मानवता के विभाजन में विश्वास रखती है, यही वजह है कि इस सभ्यता ने हमेशा मानव को ज़ात-पात, नस्ल, क़बीले, रंग, भाषा और लिंग में बाँटनेवाले विचारों को पोषित किया है। फिर इसी आधार पर पाश्चात्य सभ्यता ने अधिकारों और कर्त्तव्यों का निर्धारण किया है। इन काल्पनिक और अप्राकृतिक विभाजनों को अपनी सामाजिक व्यवस्था में दो विपरीत उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रयोग करना अपना मक़सद बनाया है। जहाँ एक ओर भेदभाव को मज़बूती प्रदान की गई है वहीं दूसरी ओर इनसे उत्पन्न होनेवाले परिणामों के निवारण के लिए अधिकार और कत्तव्यों की जंग छेड़ी गई है। विभाजन पर आधारित हर वर्ग को परस्पर विरोधी वर्गों में बाँट दिया गया है। इस विभाजन के द्वारा बड़ी चतुराई से स्त्री-पुरुष के बीच असमानता पैदा की गई है जिसे Gender Disparity अर्थात् लिंगभेद के नाम से जाना जाता है।

इस विभाजन के नाम से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि स्त्री और पुरुष को वर्तमान दौर में उनके अधिकारों को लेकर अन्याय का शिकार बना दिया गया है। इस अन्याय को रोकने के लिए अधिकारों की लड़ाई लड़ना आवश्यक हो जाता है। मौजूदा सभ्यता का मुख्य उद्देश्य यह है कि समाज के विभिन्न वर्गों को अपने अधिकार हासिल करने के लिए विभिन्न प्रकार से उलझाकर रखा जाए। इस लड़ाई में अधिकारों की प्राप्ति प्रमुख हो जाती है। अधिकारों की इस लड़ाई में कुछ विशेष नियम अकसर नज़रअंदाज कर दिए जाते हैं। पहला यह कि अधिकारों के विभाजन का मज़बूत आधार हर वर्ग की प्राकृतिक क्षमता और योग्यता को बनाना चाहिए। स्त्री और पुरुष की प्राकृतिक क्षमता और योग्तया में किसी प्रकार के मूल परिवर्तन की सम्भावना नहीं है। दूसरा नियम यह है कि अधिकार और कर्त्तव्य दोनों एक-दूसरे के सहारे पूर्ण होते हैं। यदि केवल अधिकारों के आधार पर समाज का निर्माण किया जाए तो वह अपने उद्देश्यों को

पूरा नहीं कर सकता, और यदि केवल कर्त्तव्यों के आधार पर समाज का ताना-बाना बुना जाता है तो वह अत्याचार और अशान्ति को जन्म देता है।

अधिकारों पर अधिक ध्यान देने से जो स्वतन्त्रता प्राप्त होती है, वह ज़िम्मेदारियों से दूर ले जाती है, उसूल और नियमों व मूल्यों से विमुक्तता सिखाती है, जो इनसानों को एक-दूसरे के साथ मिलजुलकर रहने के सबक़ को भुलाने का काम करती है। इससे सबसे बड़ा नुक़सान यह होता है कि ऐसे समाज में व्यक्तिगत और सामाजिक ज़िम्मेदारियों को अदा करने से बचना आम बात हो जाती है।

इस्लाम वह धर्म है जो लिंगभेद (Gender Disparity) का विरोध करता है। इस्लाम की विचारधारा के अनुसार मानवता का विभाजन अल्लाह (ईश्वर) की हिकमत और इच्छा के खिलाफ़ है।

ख़ुदा की नज़र में सारे इनसान एक समान हैं और सबको बराबर सम्मान और अहमियत मिलनी चाहिए। अल्लाह ने जो दुनिया की नेमतें पैदा की हैं वे सबके लिए हैं। उनसे दुनिया के सभी लोग फ़ायदा उठाने का अधिकार रखते हैं। क़ुरआन मजीद ने मानवीय समानता का जो स्पष्ट विचार दिया है वह यह है—

> "वह अल्लाह ही है जिसने तुम्हें एक जान से पैदा किया और उसी की जाति से उसका जोड़ा पैदा किया।"
>
> (क़ुरआन, 7:189)

दूसरी जगह क़ुरआन मजीद ने इस बुनियादी विचार की निशानदेही की है कि मानवता की उत्पत्ति के आधार पर स्त्री और पुरुष की शुरुआत एक ही माध्यम से हुई है, इसलिए अपनी वास्तविकता के आधार पर दोनों एक समान हैं—

> "फिर वह एक लोथड़ा बना, फिर अल्लाह ने उसका शरीर बनाया, फिर उसने स्त्री और पुरुष के दो प्रकार बनाए।"
>
> (क़ुरआन, 75:38,39)

इस्लामी विचारधारा के अनुसार स्त्री और पुरुष की उत्पत्ति का आधार और प्रकार एक ही है और दोनों को ही अल्लाह ने पैदा किया है, इसलिए इनमें किसी प्रकार का भेदभाव अनुचित है और अल्लाह की हिकमत के ख़िलाफ़ है। अपनी उत्पत्ति के आधार पर पुरुष को श्रेष्ठ समझना और स्त्री को हीन समझना संसार की सृष्टि को अनुचित ठहरानेवाला विचार है। दुर्भाग्य से इस्लाम से पूर्व विभिन्न विचारधाराओं ने यही खुली ग़लती की है, किसी ने स्त्री को अल्पबुद्धि बताया है, किसी ने स्त्री को केवल पुरुष की इच्छाओं की पूर्ति करनेवाले अस्तित्व की नज़र से देखा है और इस्तेमाल किया है, किसी ने इसे गुनाहों का पुलिन्दा क़रार दिया है और किसी ने स्त्री से पूर्ण विरक्ति को आध्यात्मिक विकास के लिए आवश्यक ठहराया है। इस अस्वाभाविक विभाजन का प्रभाव स्त्री-पुरुष के अधिकारों के निर्धारण पर पड़ा है। स्त्रियों के कर्त्तव्यों और ज़िम्मेदारियों पर इतना अधिक ज़ोर दिया गया है कि उसके मानवीय अधिकारों की अनदेखी हुई है।

इस्लाम ने स्त्री और पुरुष के बीच जो समानता की है वह व्यापकता की दृष्टि से अपनी मिसाल आप है। इस्लाम की शिक्षा के अनुसार स्त्री-पुरुष के बीच भेदभाव (असमानता) की कल्पना भी नहीं की जा सकती है।

इस्लाम ने अधिकारों की दृष्टि से स्त्री और पुरुष के दाम्पत्य जीवन में अधिकारों और कर्त्तव्यों दोनों को एक सा रखा है। क़ुरआन में है—

> "स्त्रियों के लिए भी सामान्य नियम के अनुसार वैसे ही अधिकार हैं जैसे कि पुरुषों के अधिकार उनपर हैं।"
>
> (क़ुरआन, 2:228)

दाम्पत्य जीवन में इस बात की अधिक सम्भावना रहती है कि पुरुष अपने प्रभुत्व का लाभ उठाकर स्त्री को उसके अधिकारों से वंचित करे और उसे मात्र सेवा और कामकाज के लिए सीमित कर दे। लेकिन वहाँ भी दोनों को यह याद दिला दिया गया है कि दानों एक दूसरे को पूर्ण करते

हैं। अधिकार केवल एक के लिए नहीं है, बल्कि प्रत्येक अधिकार के साथ ज़िम्मेदारी और कर्त्तव्य भी हैं। यह विचार प्राचीन अन्धविश्वास और आधुनिक विचारधारा दोनों से भिन्न है।

आधुनिक विकासशील युग चूँकि अधिकारों की एक तरफ़ा पैरवी करता है इसलिए दाम्पत्य जीवन में भी केवल स्त्रियों के अधिकारों की सुरक्षा और हर प्रकार की ज़िम्मेदारी से बचने को अपनी उपलब्धि समझता है। इससे जो जटिलताएँ पैदा होती हैं उनका वर्णन इंशाल्लाह आगे किया जाएगा।

स्त्रियों की उत्पत्ति को जिस तरह क़ुरआन बयान करता है वह यह है—

"उसकी (अल्लाह की) निशानियों में से यह है कि उसने तुम्हारे लिए तुम्हारी ही जिन्स (सहजाति) से बीवियाँ बनाईं, ताकि तुम उनके पास सुकून हासिल करो और तुमहारे बीच प्रेम और दयालुता पैदा की, यक़ीनन इसमें अनेक निशानियाँ हैं उनके लिए जो सोच-विचार करते हैं।" (क़ुरआन, 30:21)

उपर्युक्त आयत में इस्लाम एक ओर लिंगभेद का विरोध करता है और यह निर्देश देता है कि अल्लाह ने इनसानों की अपनी जिन्स से उनका जोड़ बनाया है, इसलिए दानों एक ही प्रकार से पैदा हुए हैं। केवल मानवीय इच्छाओं के आधार पर स्त्री-पुरुष को दो भागों में विभाजित नहीं किया जा सकता है, न तो इनमें से कोई श्रेष्ठ है और न कोई हीन। इनसानों के जोड़े बनाने का कारण यह बताया गया है कि इस प्रकार स्त्री और पुरुष के बीच मुहब्बत और दयालुता के अवसर मुहैया कराए जाएँ। ये दोनों मात्र शारीरिक सम्बन्ध बनाने के लिए नहीं हैं और न एक-दूसरे की सेवा के लिए पैदा किए गए हैं बल्कि बुनियादी मानवीय इच्छाओं की पूर्ति के लिए अवसर मुहैया किया गया है। अगर इनसान सोच-विचार से काम ले तो उसे इस बात का एहसास होगा कि अल्लाह की कितनी बड़ी कृपा है कि उन इच्छाओं की पूर्ति और सन्तुष्टि के लिए

इतनी मज़बूत नीव मुहैया कर दी है। इस तरह यह भी स्पष्ट कर दिया गया है कि स्त्री और पुरुष एक-दूसरे के बराबर भी हैं। प्रेम और स्नेह के लिए एक-दूसरे पर आश्रित भी हैं और मानवीय समाज को बनाने का एक अति प्रभावी माध्यम भी। स्त्री के आदर और उच्च स्थान को दर्शानेवाला यह एक श्रेष्ठ उदाहरण है।

लिंगभेद की विचारधारा की जड़ें काटने के लिए इस्लाम ने जो बहुआयामी व्यवस्था प्रदान की है इसके कुछ मूल उदाहरण इबादात और इस्लामी कर्त्तव्यों के वर्णन में भलि-भाँति निहित हैं। शरीअत के आदेशों के साथ-साथ इनाम और बदले का जो विचार क़ुरआन मजीद ने दिया है वह भी उस काल्पनिक सोच पर गहरी चोट करता है।

"और जो गुमराह हो उसकी गुमराही का वबाल उसी पर है और कोई बोझ उठानेवाला दूसरे का बोझ नहीं उठाएगा"

(क़ुरआन, 17:15)

"और जो कोई अच्छे कार्य करेगा चाहे वह स्त्री हो या पुरुष बशर्ते कि ईमानवाला हो तो ऐसे ही लोग जन्नत में दाख़िल होंगे।"

(क़ुरआन, 4:124)

"मैं तुममें से किसी का कर्म व्यर्थ करनेवाला नहीं हूँ चाहे वह स्त्री हो या पुरुष।" (क़ुरआन, 3:195)

इन आयतों से स्पष्ट है कि जहाँ तक आम शरई ज़िम्मेदारियों का सम्बन्ध है और अपने कर्त्तव्यों के निर्वहण का मामला है इसमें स्त्री-पुरुष के बदले और सवाब में अल्लाह ने किसी प्रकार का भेदभाव नहीं रखा है। दोनों अल्लाह की मख़लूक़ (सृष्टि) हैं, दोनों ईमानवाले हैं और दोनों को इस वास्तविकता से भलि-भाँति अवगत हो जाना चाहिए कि क़ियामत के दिन दोनों को अल्लाह के सामने अलग-अलग जवाब देना होगा। न तो पुरुष किसी का बोझ उठाएगा और न स्त्री अपने पति या अन्य सम्बन्धियों का बोझ उठाएगी। बदले के दिन सब बराबर होंगे इसलिए लिंगभेद एक बेकार की विचारधारा है।

जहाँ तक मोमिन (मुसलमान) के असली मक़सद का सम्बन्ध है उसकी अदायगी और पूरा करने में स्त्री और पुरुष दोनों एक-दूसरे के साथी और सहयोगी होंगे। कोई स्त्री अपने कर्त्तव्यों की अदायगी न कर पाने के लिए यह बहाना नहीं बना सकती कि वह अपने पति के प्रभाव में थी इसलिए अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह नहीं कर सकी। भले कार्य करने का हुक्म देने और बुराई से रोकने की ज़िम्मेदारी को पूरा करने के लिए दोनों बराबर हैं।

"मोमिन मर्द और मोमिन औरतें ये सब एक दूसरे के मित्र हैं भलाई का आदेश देते हैं और बुराई से रोकते हैं।"

(क़ुरआन, 9:71)

इसका विस्तारपूर्वक वर्णन क़ुरआन की एक आयत में इस प्रकार बयान किया गया है कि अच्छे कार्यों के लिए साथ मिलकर संघर्ष करनेवाले स्त्री-पुरुष, जो अपने मालिक और पालनहार की राह में अपने माल को ख़र्च करते हैं, उन सबके लिए इसका बदला कई गुना बढ़ाकर दिया जाएगा—

"स्त्री और पुरुषों में जो ख़ुदा की राह में धन ख़र्च (सदक़ा) करते हैं और जिन्होंने अल्लाह को क़र्ज़े-हसन (अच्छा ऋण) दिया है उनको अवश्य कई गुना बढ़ाकर दिया जाएगा और उनके लिए बेहतरीन बदला है।" (क़ुरआन, 57:18)

इससे अधिक विस्तार से क़ुरआन मजीद की एक आयत में अनेक नेकियों को गिनाया गया है। प्रत्येक में स्त्री-पुरुष को बदले और सवाब के लिहाज़ से बराबर रखा गया है और एक मुस्लिम समाज का निर्माण इस तरह किया गया है कि इसमें स्त्री और पुरुष दोनों इन अच्छे कार्यों में एक-दूसरे से आगे बढ़ना चाहते हैं। अपने लिंग के आधार पर न कोई श्रेष्ठ है और न कोई हीन हैं। अल्लाह के निकट तो उनकी अच्छाइयाँ ही अहमियत रखती हैं जिनकी वजह से वे उच्च स्थान प्राप्त करते हैं।

"निश्चय ही जो मर्द और जो औरतें मुस्लिम हैं.....
अल्लाह ने उनके लिए क्षमादान और बड़ा बदला तैयार कर रखा है।" (क़ुरआन, 33:35)

स्त्री-पुरुष की समानता की क़ुरआन द्वारा प्रस्तुत अवधारणा जीवन के प्रति उस ग़लत विचारधारा की मूल त्रुटि को दर्शाती है जिसमें पहले से प्रचलित लिंगभेद को बढ़ावा दिया जाता है और जब उसके बुरे परिणाम सामने आते हैं तो उन्हें समाप्त करने के लिए संघर्ष छेड़ दिया जाता है। इस्लामी अवधारणा की यह विशेषता है कि इसने अधिकार और कर्त्तव्यों के निर्धारण में इस बात पर विशेष ध्यान दिया है कि प्रत्येक लिंग (स्त्री/पुरुष) के कर्त्तव्यों को निर्धारित किया जाए। जहाँ इस्लाम ने सामाजिक जीवन में स्त्री का मौलिक कर्त्तव्य परिवार को सँवारना और बच्चों का पालन-पोषण और तरबियत रखा है और इसके लिए अधिकार और कत्तव्यों का निर्धारण किया है, इसी प्रकार पुरुष को यह ज़िम्मेदारी दी गई है कि वह समाज निर्माण और इसकी मज़बूती के लिए कार्य करे। इसी आधार पर पुरुष के अधिकार भी सुनिश्चित किए गए हैं। इस्लाम ने घर को सँभालने और आजीविका की ज़िम्मेदारी पुरुष को दी है और इस ज़िम्मेदारी की वजह से उसे घर के मुखिया का स्थान दिया गया है।

"मर्द औरतों के संरक्षक और निगराँ हैं, इस आधार पर कि अल्लाह ने उनमें से एक को दूसरे के मुक़ाबले में आगे रखा है, और इस आधार पर कि पुरुष अपना माल ख़र्च करते हैं।" (क़ुरआन, 4:34)

इस आयत में इस बात की ओर संकेत है कि आजीविका कमाने की ज़िम्मेदारी अस्ल में पुरुषों की है, स्त्री की नहीं। इस आधार पर दोनों के अधिकार निर्धारित किए गए हैं।

शुद्ध धार्मिक और आध्यात्मिक संघर्ष में भी इस्लाम ने लिंगभेद को स्थान नहीं दिया है। स्त्री-पुरुष दोनों को यह ख़ुशख़बरी दी है कि वे अपने कर्मों और दीन के लिए की गई मेहनत के अनुसार ख़ुदा के यहाँ सम्मान

और पुरस्कार के अधिकारी होंगे और क़ियामत के दिन अंधकार में भी प्रकाशित होंगे। क़ुरआन में कहा गया है--

> "उस दिन जबकि तुम ईमानवाले पुरुषों और स्त्रियों को देखोगे कि उनके आगे-आगे और उनकी दाईं ओर में उनका नूर (प्रकाश) दौड़ रहा होगा (उनसे कहा जाएगा कि) आज तुम्हारे लिए ख़ुशख़बरी है। जन्नतें हैं जिनके नीचे नहरें बह रही हैं, जिनमें वे हमेशा रहेंगे। यही बड़ी सफलता है।"
>
> (क़ुरआन, 57:12)

इस्लाम में स्त्रियों के इस सम्मान के उदाहरण और भी हैं। मिसाल के तौर पर अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) का यह कथन कि "जन्नत माँ के पाँव के नीचे है" और नबी (सल्ल॰) का यह कथन कि "तुम्हारे अच्छे व्यवहार की सर्वप्रथम अधिकारी तुम्हारी माँ है।" या स्त्रियों का यह विशेष सम्मान कि हज जैसी इबादत में हज़रत हाजरा की सुन्नत सफ़ा-मरवा के बीच सई (दौड़ लगाने) को इस इबादत में शामिल किया गया है और इस इबादत का अंग बना दिया गया है।

इन उदाहरणों पर विचार करने के बाद क्या यह कहना उचित होगा कि इस्लाम ने स्त्रियों की उपेक्षा की है, और इस्लामी या मुस्लिम समाज में लिंगभेद पाया जाता है, स्त्रियों पर अत्यधिक बोझ डाले जाते हैं और उन्हें अधिकारों से वंचित किया जाता है और उनकी स्वतन्त्रता छीन ली जाती है और उन्हें परदे में रहने के लिए विवश किया जाता है। उसे पुरुष द्वारा कुछ शब्द कह देने के परिणामस्वरूप घर से बाहर निकाल दिया जाता है।

इसकी तुलना में वर्तमान समय में स्त्रियों की स्थिति विचारणीय है, जहाँ स्त्रियों पर दाद और प्रशंसा दिल खोलकर न्योछावर की जाती है। आधुनिक सभ्यता की अवधारणा इस्लाम की विचारधारा से कितनी भिन्न है इसका आंकलन करने के लिए कुछ बातों को स्पष्ट करना आवश्यक है।

इस्लाम लिंगभेद को समाप्त करने का कितना समर्थन करता है यह इस बात से स्पष्ट हो जाता है कि इस्लाम अपनी सन्तानों में लड़कियों के साथ अच्छा व्यवहार करने की शिक्षा देता है। नबी (सल्ल॰) की इन शिक्षाओं का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है जब इन्हें अरब के इस्लाम पूर्व अन्धविश्वासी समाज से जोड़कर देखा जाता है जहाँ लड़कियों का जन्म लेना भी अपमान की बात समझी जाती थी और लड़कियों को ज़िन्दा ज़मीन में गाड़ दिया जाता था। नबी (सल्ल॰) का कथन है–

> "जिस व्यक्ति के (घर) कोई लड़की जन्म लेती और उसने अन्धविश्वासी न होकर उसे ज़िन्दा ज़मीन में नहीं गाड़ा और न इसको हीन समझा और न लड़कों को इसकी तुलना में प्रधानता दी, तो अल्लाह ऐसे व्यक्ति को स्वर्ग में भेजेगा।"
>
> (हदीस : अबू-दाऊद-अन इब्ने-अब्बास)

एक दूसरी रिवायत में नबी (सल्ल॰) का कथन है–

> "जिस व्यक्ति की इन लड़कियों के द्वारा परीक्षा ली गई, फिर उसने इन लड़कियों के साथ अच्छा व्यवहार किया तो ये लड़कियाँ उस व्यक्ति के लिए जहन्नम से बचाने का साधन बन जाएँगी।"
>
> (हदीस : बुख़ारी व मुस्लिम,)
>
> (एक लम्बी हदीस का अंतिम भाग)

एक दूसरी हदीस में नबी (सल्ल॰) ने बेसहारा बेटी (जो तलाक़शुदा हो या जिसकी शादी न हो सकी हो) के भरण-पोषण को उत्तम सदक़ा (ख़ुदा की राह में ख़र्च किया गया धन) क़रार दिया है। (हदीस : इब्ने-माजा)

एक बहुत प्रभावी हदीस वह है जिसमें अल्लाह के नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया–

> "और जिस व्यक्ति ने तीन बेटियों या तीन बहनों की सरपरस्ती की और उन्हें शिक्षित किया और उनके साथ अच्छा

व्यवहार किया यहाँ तक कि अल्लाह तआला उन्हें बेनियाज़ (निस्पृह) कर दे तो ऐसे व्यक्ति के लिए अल्लाह ने जन्नत वाजिब (अनिवार्य) कर दी। इसपर एक व्यक्ति ने कहा कि अगर दो ही हों? तो नबी (सल्ल॰) ने कहा कि दो लड़कियों की सरपरस्ती के लिए भी यही बदला है।"

(हदीस : मिश्कात,)

इन कथनों को इस्लाम पूर्व अज्ञान काल के परिदृश्य में देखने पर इनकी महत्ता कई गुना बढ़ जाती है, जहाँ स्त्रियों का जन्म लेना ही अपमान का कारण समझा जाता था। भारत में भी वर्तमान समय में कन्या भ्रूण हत्या का चलन देखने में आया है। इस चलन में ग़रीबों और अमीरों की एक बड़ी संख्या शामिल हो रही है। इस कन्या भ्रूण हत्या को Female Foeticide के नाम से जाना जाता है। स्त्री-पुरुष के बीच भेदभाव का सिलसिला जन्म के समय से ही शुरू हो जाता है और किसी न किसी रूप में इसे सामाजिक मजबूरियों से संरक्षण प्राप्त होता है इससे लिंगभेद क़ायम रहता है।

इस्लाम केवल नियम और विचारों के वर्णन करने तक सीमित नहीं है बल्कि विस्तृत क़ानून भी प्रदान करता है। इन क़ानूनों के आधार पर उसने न्याय पर आधारित समाज की रूपरेखा भी प्रस्तुत की है। प्रत्येक मर्द-औरत के अधिकार भी तय किए हैं और कर्त्तव्य भी। यहाँ न्याय पर आधारित इन क़ानूनों का विस्तार प्रस्तुत करना सम्भव नहीं है लेकिन इनका उल्लेख आवश्यक है ताकि यह अंदाज़ा लगाया जा सके कि इस्लाम केवल उपदेश और भाषण से काम नहीं लेता बल्कि नियम-क़ानून को संग्रहित करके उसके उद्देश्य को प्राप्त करना चाहता है अतः इसका आरम्भ दाम्पत्य जीवन में पूर्ण सन्तुलन से करता है। इसने निकाह (विवाह) के लिए स्त्री और पुरुष को समान अधिकार प्रदान किए हैं। स्वीकृति का अधिकार दोनों को दिया गया है। तलाक़ और ख़ुलअ का अधिकार दोनों को प्रदान किया गया है। अगर इस्लाम ने ख़ुलअ के

अधिकार को कुछ विशेष शर्तों के साथ सीमित किया है तो इसके लिए उचित और मज़बूत तर्क भी दिए हैं। इसी तरह विरासत के विभाजन के लिए भी न्यायपूर्ण क़ानून प्रस्तुत किए गए हैं अर्थात् विरासत को ज़िम्मेदारियों के लिहाज़ से उचित अनुपात से विभाजित किया है।

इन न्यायपूर्ण क़ानूनों और नियमों को इस्लाम ने प्रत्येक मर्द और औरत की ज़िम्मेदारियों से जोड़ा है और सज़ा और पुरस्कार के मामले में अतिउत्तम सन्तुलन से काम लिया है। अगर किसी ने अपराध किया है तो उसके लिए सज़ा का प्रावधान है और अगर किसी ने नेक कार्य किए हैं तो उसके लिए सवाब और पुरस्कार का प्रावधान किया गया है।

इसके विपरीत आधुनिक सभ्यता में स्त्री और पुरुष को दो वर्गों में विभाजित किया गया है। इसके परिणामस्वरूप स्त्री और पुरुष के अधिकार निर्धारित करने में इसको प्रत्येक क़दम पर असफलता का सामना करना पड़ा है।

इन असफलताओं के अनेक उदाहरण मौजूद हैं। पूर्व सभ्यता और संस्कृति को रद्द करने के उत्साह में सर्वप्रथम आधुनिक सभ्यता ने 'नारी मुक्ति' (Women's Liberation) का आन्दोलन चलाया। इस आन्दोलन का उद्देश्य यह था कि अधिकारों की दृष्टि से स्त्री-पुरुष दोनों को समानता मिले। इस आन्दोलन के निकट समानता केवल अधिकारों की प्राप्ति का माध्यम नहीं है, बल्कि इसका असल उद्देश्य पुरुषों को नीचे लाना है। अर्थात् इस आन्दोलन का मूल बिन्दु यह है कि पुरुषों से अधिकार छीने जाएँ। इसके लिए प्रत्येक क्षेत्र में लड़ाई की शुरुआत की जाए। स्त्री स्वतन्त्रता आन्दोलन का दूसरा उद्देश्य यह है कि स्त्रियों के अधिकार कुछ इस प्रकार हों कि वे जीवनभर और हर क्षेत्र में इस प्रकार हावी हों जिस तरह पुरुषों के अधिकार, राजनीति, समाज, कला, आजीविका, पारिश्रमिक सबमें उसे पुरुषों के बराबर अधिकार मिले। इस धुन की लय इतनी बढ़ गई कि पारिवारिक जीवन के कर्त्तव्य स्त्रियों को असहनीय बोझ लगने लगे और संतान की शिक्षा व पालन-पोषण को अपने

लिए नागवार समझकर ऐसे प्रस्ताव और योजनाएँ प्रस्तुत की जाने लगीं कि जिससे यह अस्ल ज़िम्मेदारी व्यक्ति से हटाकर समाज को स्थानान्तरित की जा सके। स्त्री-पुरुष के अधिकारों की समानता के समर्थक एक वर्ग का मानना है कि बच्चे के जन्म की पीड़ा और बोझ को केवल स्त्री ही क्यों झेले, इसका बोझ पुरुषों को भी उठाना चाहिए। इसके लिए मानवीय 'शरीर के अंगो और बनावट' (Anatomy) में बदलाव किए जाने पर ज़ोर दिया गया, ताकि बच्चे के जन्म की मुश्किलों को पुरुषों पर भी डाला जा सके। जिस तरह वे आनन्द उठाते हैं उसी तरह कष्ट भी उठाएँ।

अधिकारों की लड़ाई के क्षेत्र में लोग यह भूल गए हैं कि इससे सदियों से चली आ रही पारिवारिक व्यवस्था को कितना ज़्यादा नुक़सान पहुँचेगा। यदि स्त्री और पुरुष मिलकर पारिवारिक व्यवस्था को पूरा नहीं करेंगे तो न तो वह स्थिति बनी रह सकती है जो स्त्री और पुरुष के मध्य प्रेम और लगाव को बनाए रखती है और न ही सन्तान का पालन-पोषण पूरी तरह से हो सकेगा। इस प्रकार सभ्यता के अलमबरदारों को जल्दी ही पता चल गया कि समाज में अपराध कितना बढ़ने लगा है। परम्पराओं का सम्मान करना बन्द हो गया जिसके परिणामस्वरूप माता-पिता से प्रेम कम हो गया और उनके प्रति सम्मान समाप्त हो गया। इस आन्दोलन का एक प्रभाव यह पड़ा कि माँ को अपने अंगों की ख़ूबसूरती क़ायम रखने में अधिक रुचि पैदा हो गई और बच्चे माँ के दूध से वंचित रहने लगे। डिब्बे के दूध पर निर्भरता बढ़ती गई। लेकिन इस मामले में डॉक्टरों द्वारा बहुत ज़ोर दिए जाने और प्रयास किए जाने के बाद माँ का दूध फिर से बच्चे के लिए वापस आ रहा है। परिवारों के बिखरने और परिवार के लोगों के बीच आपसी प्रेम और लगाव में कमी आने की वजह से बुज़ुर्ग माता-पिता को अधिक उम्र होने पर घर से निकाला जाने लगा और हर शहर में वृद्ध आश्रम (Old Age Homes) का निर्माण होने लगा। इन वृद्ध आश्रमों

पर एक नज़र डालने से ही यह अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि स्त्री अधिकारों का यह आन्दोलन समाज को किस दिशा में ले जा रहा है।

आधुनिक दौर में स्त्री स्वतन्त्रता को लेकर दो बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित करना ज़रूरी है जिन्होंने स्त्री के व्यक्तित्व को बिल्कुल बदलकर रख दिया है। इस आन्दोलन की दृष्टि में स्त्री केवल एक उपभोग की वस्तु है। इसके साथ शारीरिक सन्बन्ध बनाना स्त्री और पुरुष के परस्पर सन्बन्धों की शुरुआत भी है और अन्त भी। स्त्री का शारीरिक आकर्षण अस्ल ग़ौर करने योग्य वस्तु है। इसी सोच के परिणामस्वरूप बाज़ार सुन्दरता और साज-सज्जा के सामान से पट गए और पारिवारिक जीवन का बजट बिगड़ता चला गया। स्त्री को सुन्दर बनाए रखने और उसकी प्राकृतिक इच्छा जैसे सुन्दरता को पूरा करने के लिए जुटाए गए सामान से औरत की सुंदरता तो निखरी लेकिन औरत की सुन्दरता स्वयं बाज़ार की वस्तु बनकर रह गई। आज अगर किसी सामान को बेचना है तो स्त्री की सुंदरता का प्रदर्शन आवश्यक है। स्त्री को अदब और सम्मान की ऊँचाई से गिराकर अपमान के अस धरातल पर ले आना नई सभ्यता का कारनामा है। यदि हम स्त्री की सुंदरता को अछूता रखने का प्रयास करते हैं तो उसपर व्यंग्य किए जाते हैं कि स्त्री को क़ैद में रखा जा रहा है। लेकिन अगर स्त्री की सुन्दरता को बाज़ार की वस्तु बना दिया जाता है जिसके बग़ैर न कारें बिकती हैं न ही परिधान, न गीत न संगीत और न ही पत्र-पत्रिकाएँ, न बच्चों के दूध के डिब्बे तो इसे वर्तमान सभ्यता के पैरोकार स्त्री की दिलेरी क़रार देते हैं।

इस सोच ने स्त्री और पुरुष दोनों की प्रकृति को इतना बिगाड़ दिया है कि अब पहचानना कठिन हो गया है कि यह वही औरत है जिसको सम्मान स्वरूप लोग आँखों पर बैठाते थे।

उपभोग की वस्तु बनाने और स्त्री अधिकारों पर अधिक ज़ोर देने से एक तरफ़ा तमाशा यह भी ग़ौर करने लायक़ है कि अब कुछ स्त्रियाँ यह दावा भी करने लगी हैं कि अगर वे सुंदर हैं तो उन्हें अपनी

सुन्दरता का बीच बाज़ार प्रदर्शन करने का भी अधिकार प्राप्त है। वे चाहे नग्न रहें और चाहे अपने नग्न शरीर को धन के लिए बेच दें, यह उनका अधिकार है। किसी को इस मामले में उंगली उठाने का हक़ नहीं है। एक महिला ने एक पत्रिका के पृष्ठ में अपनी सुन्दरता का इसी प्रकार प्रदर्शन किया था। जब उनसे इस सम्बन्ध में प्रश्न किया गया कि आपने इस प्रकार का कार्य क्यों किया तो उस महिला ने उत्तर दिया कि यह सुन्दरता मेरी है, "यह शरीर मेरा है, इसके प्रदर्शन पर किसी को प्रतिबन्ध लगाने का अधिकार नहीं है।" स्त्री और पुरुष का परस्पर सम्बन्ध वास्तव में केवल यौन आधारित है, इसका एक और भी पहलू आधुनिक सभ्यता सामने ला रही है। कुछ दिनों पहले की बात है, दिल्ली के एक राष्ट्रीय दैनिक समाचार पत्र ने सर्वे किया था कि नौजवानों की बड़ी संख्या ऐसी भी है जो शादी के लिए सुंदर और उन्नत अंगोंवाली लड़कियाँ पसन्द करते हैं, जो शादी के बंधन में बंधने के बाद अपने पति की आय में वृद्धि का साधन बनती हैं। अर्थात् वेश्यावृत्ति अब अच्छे परिवारों में भी प्रवेश कर गई है। इसी लिए अब भाषा और शब्दावली भी बदलती जा रही है। अब वेश्या के स्थान पर Sex Worker (यौन कार्यकर्त्ता या यौनकर्मी) शब्द का प्रयोग होने लगा है। अब महिलाओं का आदर-सत्कार केवल उसके शरीर की सुन्दरता के आधार पर किया जाता है। कुछ महिलाएँ ऐसी भी हो सकती हैं जिनका सम्मान उनकी बौद्धिक क्षमता या सामाजिक कार्यों के कारण होता है। आधुनिक सभ्यता में महिलाओं को कितना सम्मान मिलता है इसके लिए समाचार पत्र और पत्रिकाएँ देखनी चाहिएँ जिनके पन्ने स्त्री की नग्न या अर्धनग्न चित्रों से भरे रहते हैं।

आधुनिक सभ्यता में स्त्री के अधिकारों और स्वायत्तता के लिए जो पैमाने तैयार किए गए हैं उनमें भी यौन भावना प्रमुख है। इसका प्रमुख उदाहरण संयुक्त राष्ट्र के तत्वाधन में वर्तमान में आयोजित सम्मेलन हैं जिनमें से दो सम्मेलन अपने उद्देश्य और दिशा की पुष्टि करते हैं। एक

सम्मेलन क़ाहिरा में आयोजित हुआ जिसका आयोजन संयुक्त राष्ट्र की विश्व जंनसंख्या फ़ंड द्वारा किया गया। इस सम्मेलन में सेक्युलर (धर्मनिरपेक्ष) विचारधारा के समर्थकों ने महिला अधिकारों पर अपना पूरा ध्यान केन्द्रित किया। इसमें चर्चा की गई कि स्त्रियों को पूर्ण रूप से यह अधिकार दिया जाना चाहिए कि वे जिस समय चाहें बच्चे को जन्म दे। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो वे जिस पुरुष से और जिस प्रकार से चाहें यौन सम्बन्ध बनाए और जब चाहें बच्चे को जन्म दें या न दें। इस प्रकार इस स्वतन्त्रता को क़ायम करने के लिए महिला को गर्भपात करने की भी अनुमति मिलनी चाहिए। क़ानून में इस प्रकार का संशोधन किया जाए जिससे स्त्री को बच्चे को जन्म देने के लिए या गिराने के लिए सुविधा मिले और इसके लिए उसे पुरुष की अनुमति की आवश्यकता न हो। सम्मेलन में कुछ महिलाओं ने यह राय दी कि धार्मिक रीतियों, मेलों और धार्मिक स्थलों में इस प्रकार के कार्यक्रम रखे जाएँ जो निरोध की अहमियत का प्रचार करें और जिनमें गर्भ रोकने के उपाय बताए जाएँ। दिलचस्प बात यह है कि इस तरह की स्वतन्त्रता को स्त्रियों के स्वास्थ्य सन्बम्धी कार्यक्रम का अंग क़रार दिया गया था। इससे कहीं आगे वह सम्मेलन था जो बीजिंग प्लस फ़ायो क़ान्फ्रेन्स 2000 के नाम से मशहूर है। इसके कार्यक्रम और भाषण, सेमिनार और सिम्पोज़ियम और डाक्युमेंट सबका केन्द्र महिलाओं की स्वतन्त्रता और उसकी स्थिति को बेहतर बनाना था। इसमें बीजिंग डिक्लेरेशन और ऐक्शन के लिए प्लेटफ़ार्म का बड़ी धूमधाम के साथ प्रचार किया गया। इस सम्बन्ध में महिलाओं के विकास और भलाई के लिए 12 सूत्रीय समाधान प्रस्तुत किया गया, लेकिन सर्वाधिक ज़ोर यौन हिंसा पर दिया गया था, जहाँ पुरुष अपनी यौन इच्छाओं को बलपूर्वक औरत से पूरी करना चाहे। दूसरा बिन्दु समलैंगिक पुरुषों का था। उनकी माँग थी कि उन्हें क़ानूनी तौर पर अल्पसंख्यक स्वीकार किया जाए। इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए दो बहुत ही अहम प्रश्न थे। पहला यह कि 12 सूत्रीय कार्यक्रम को पूरा करने के लिए

बजट काहँ से पूरा किया जाएगा। दूसरा यह कि पारिवारिक व्यवस्था को बनाए रखना कैसे सम्भव होगा। लेकिन सम्मेलन के आयोजकों की प्रमुख चिंता पश्चिमी सभ्यता का प्रसार था। उस स्वतन्त्रा को पाना लक्ष्य था जिसके परिणामस्वरूप स्त्री-पुरुष एक-दूसरे से पूर्णता हमेशा के लिए अलग एक स्थाई अस्तित्व बन जाएँ।

इस स्वतन्त्रता का सबसे प्रमुख प्रभाव पाश्चात्य समाज पर इस प्रकार पड़ा है कि वहाँ एकाकी परिवार (Single Parent Family) की प्रथा चल पड़ी है। पाश्चात्य सभ्यता आडम्बर पर आधारित सभ्यता है।

एकाकी परिवारों के बनने से यह बात साफ़ होती है कि स्त्री-पुरुष यौन सम्बन्धों के बाद अलग हो सकते हैं, अलग रह सकते हैं। किसी समाज को क्या अधिकार है कि वह इसमें बाधा डाले। मगर वास्तविकता यह है कि इन निर्णयों का प्रभाव महिलाओं, ख़ासकर माँ पर पड़ता है। पुरुष तो बच्चे पैदा करके या उनके पैदा होने का कारण बनकर इससे सम्बन्धित सभी ज़िम्मेदारियों से अपना दामन झाड़कर अलग हो जाता है, लेकिन औरत बेचारी अपने बच्चों को गोद में लिए जीवन के एक लम्बे भाग में ज़िम्मेदारियाँ उठाती रहती हैं। यह स्त्री का सम्मान है या उसका अपमान? इस्लामी सामाजिक व्यवस्था में सृजनात्मक कार्यों में स्त्री-पुरुष समान रूप से शामिल रहते हैं। स्त्री पर पालन-पोषण का ज़िम्मा होता है जबकि पुरुष के कांधों पर अजीविकाएँ कमाने की ज़िम्मेदारी होती है। एकाकी परिवार (Single Parent Family) व्यवस्था से महिलाएँ अधिक प्रभावित होती हैं, उन्हें बेसहारा छोड़ दिया जाता है या स्त्री पाश्चात्य सभ्यता के ग्लैमर में खोकर यौन सुख में लीन हो जाती है तो बेबसी और अकेलेपन की ख़ौफ़नाक वादियों में इसे छोड़ दिया जाता है। उसके बाद अकेली माँ न तो सन्तान की उचित देखभाल कर सकती है न ही उन्हें ठीक से शिक्षित कर पाती है। स्त्रियों की यह स्वतन्त्रता वास्तव में स्वतन्त्रता है या ऐसे जुर्म की सज़ा है जो समाज द्वारा पैदा किया गया

है। ये उदाहरण इस बात की पुष्टि करते हैं कि वर्तमान समाज में स्त्री को मात्र यौन सुख प्राप्त करने और उसके शरीर से लाभ उठाने का साधन समझा जाता है।

स्त्री को मूल रूप से सुन्दरता और उपभोग की वस्तु बनाने के कारण जो प्रभाव हमारे देश पर पड़ रहे हैं उसके लिए उत्तेजित करने वाला अंग्रेज़ी संगीत, साहित्य, कला संस्कृति, पत्रिकाएँ, देश के समाचार-पत्र आदि ज़िम्मेदार हैं और इससे आगे बढ़कर टीवी और केबल ने इस काम में अपनी अहम भूमिका निभाई है।

यौन आकर्षण के बढ़ने के कारण जीवन के पवित्र रिश्ते भी प्रभावित हो रहे हैं। हाल ही में दिल्ली में एक अनुमान के आधार पर खुलासा हुआ है कि बलात्कार के कुल मामलों में लगभग 75 प्रतिशत मामले ऐसे हैं जिनमें क़रीबी रिश्तेदार शामिल थे। कौटुम्बिक व्यभिचार (Incest) की घटानाएँ इतनी बढ़ गई हैं कि अब आप अपनी बेटियों को पिता या चाचा की शरण में भी सुरक्षित नहीं समझ सकते हैं। कुछ घिनौनी घटनाएँ तो ऐसी हुई हैं जिनमें कुछ पिताओं ने वर्षों तक अपनी बेटी के साथ यौन सन्बम्ध बनाए हैं। स्कूल का पवित्र माहौल भी इस बुराई से अछूता नहीं रह गया है। यही वजह है कि शिक्षकों के भी यौन शोषण में शामिल होने की घटनाएँ सामने आई हैं। डॉक्टर भी अपनी मरीज़ महिला का यौन शोषण करने से बाज़ नहीं आ रहे हैं। आज अगर पवित्र रिश्ते और सामाजिक सम्बन्ध भी यौन शोषण से अछूते नहीं रह गए तो इसके लिए कौन ज़िम्मेदार है? स्पष्ट है कि इसके लिए पाश्चात्य सभ्यता ज़िम्मेदार है जिसने स्त्री को उपभोग और यौन इच्छाओं की पूर्ति करने के साधन के रूप में प्रस्तुत किया है। स्त्री को आर्थिक मामलों से लेकर राजनीति तक प्रलोभन का साधन बना दिया गया है। यदि आपको राजनेताओं से कोई काम निकलवाना है तो महिला का प्रयोग किया जाता सकता है।

अब क़ानून व्यवस्था के ज़िम्मेदार Police and Military Forces भी उपद्रवियों या मज़लूमों को सज़ा देने के लिए महिलाओं को अपमानित करने (यौन उत्पीड़न) को एक कारगर हथियार मानते हैं। मेरठ और मुज़फ़्फ़रनगर में उत्तराखंड राज्य की माँग को लेकर प्रदर्शन करनेवालों में शामिल महिलाओं का यौन उत्पीड़न जो पुलिस बल द्वारा किया गया इसका एक उदाहरण है। इससे पूर्व सूरत में मुस्लिम युवतियों को नग्न करके घुमाया गया और उनका यौन उत्पीड़न किया गया और इसका वीडियो बनाया गया। कश्मीर में हमारी सेना के जवान इन घटनाओं में बराबर शामिल हैं। इस जुर्म में केवल भारत के शान्ति व्यवस्था के ज़िम्मेदार ही शामिल नहीं हैं, बल्कि यह वर्तमान युग का वह कैंसर है जिसमें यूरोप और अमेरिका भी पूरी तरह गिरफ़्तार हैं। बोसनीया में बड़े पैमाने पर मुस्लिम महिलाओं के साथ बलात्कार किया गया और अब भी जहां अवसर मिलता है पाश्चात्य सभ्यता के ध्वजावाहक अमेरिका के सैनिकों ने इसी घटना को इराक़ और अफ़ग़ानिस्तान में अंजाम दिया है। यह पाश्चात्य सभ्यता की विचारधारा का विरोधाभास ही है जो एक तरफ़ महिला अधिकारों की पैरोकारी तो करती है लेकिन स्त्री का यौन शोषण करने को अपने शत्रुओं को सज़ा देने का एक माध्यम भी समझती है।

स्त्रियों के सामूहिक अपमान की घटनाएँ अब शिक्षण-संस्थानों में भी देखने को मिलने लगी हैं। राजस्थान विश्वविद्यालय के हॉस्टल में सामूहिक बलात्कार की घटना इसका एक उदाहरण है। कॉलेज के एक छात्र के पुलिस सेवा में चयन पर मनाए जा रहे जश्न में पहले ब्लू फ़िल्म और शराब का दौर चला और इसके बाद एक लड़की के साथ सामूहिक बलात्कार की घटना को अंजाम दिया गया। इस अवसर पर वहाँ मौजूद अन्य छात्र तमाशबीन बने रहे।

हमारे देश में स्त्री का कितना सम्मान है इसका अंदाज़ा नवजात बच्चियों की हत्या की घटनाओं से सरलता-पूर्वक लगाया जा सकता है। लड़के की चाह में और परिवार के तानों से बचने के लिए माँएं अपनी नवजात बेटियों को मजबूरन मार डालती हैं। पहले जन्म के बाद माँए अपनी बच्ची को अलग-अलग तरीक़े से मार डालती थीं, लेकिन अब विज्ञान की प्रगति से ऐसा करने की ज़रूरत नहीं पड़ती है। आज अल्ट्रासाउंड के द्वारा गर्भ में पल रहे भ्रूण के लिंग का पता लगाया जा सकता है अगर वह लड़की है तो उसे गर्भपात के द्वारा समाप्त कर दिया जाता है। चिन्ता की बात यह है कि पहले कन्या-भ्रूण हत्या में ग़रीब लोग और पिछड़े क्षेत्र ही के लोग शामिल थे लेकिन अब पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक जैसे समृद्ध प्रदेशों में भी कन्या भ्रूण हत्या की घटनाओं में बढ़ोतरी दर्ज की गई है। इसके पीछे सोच यह है कि लड़कियाँ परिवार के ख़र्च को बढ़ाती हैं, वे आय का साधन नहीं हैं और वे परिवार के सम्पत्ति विभाजन का माध्यम बनती हैं। भारतीय समाज में कुछ परम्पराएँ ऐसी हैं जिन्हें परिवार में मरते समय केवल लड़के ही पूरी कर सकते हैं। इसलिए लड़कियों की नहीं बल्कि लड़कों की ज़रूरत होती है। दहेज प्रथा भी लड़कियों को बोझ समझने का एक माध्यम है।

पाश्चात्य सभ्यता ने स्त्रियों को बहुत कुछ देने का एलान किया है और कुछ क्षेत्रों में अहम कार्य किए हैं। लेकिन इस सभ्यता को अधिकार और कर्त्तव्यों के नियोजन और कार्यान्वयन के मामले में असफलता ही हाथ लगी है। इस सभ्यता ने महिलाओं के अधिकारों का इतना शानदार नक़्शा बनाया कि जिसमें कर्त्तव्यों के लिए कोई विशेष स्थान नहीं था। मानवीय समाज का ऐसा ढाँचा तैयार किया गया और इस बात पर कोई ध्यान नहीं दिया गया कि परिवार की मज़बूती और उसकी स्थिरता समाज के निर्माण और विकास के लिए कितनी ज़रूरी है। किसी परिवार को स्त्री-पुरुष मिलकर बनाते हैं, दोनों के लिए यह आवश्यक है कि वे प्रेम और स्नेह की

ज़ड़ों को मज़बूत करें। अधिकार और कर्त्तव्य मिलकर एक स्वस्थ समाज का निर्माण करते हैं। इससे न्याय को बल मिलता है। इस्लाम ने ऐसी ही न्यायपूर्ण व्यवस्था प्रस्तुत की है। मानव ने जब भी अल्लाह के आदेशों की अनदेखी की है और इससे अलग अन्यायपूर्ण व्यवस्था का निर्माण करने का जब-जब प्रयास किया है उसे असफलता ही हाथ लगी है।

अधिकार और कर्त्तव्यों के मध्य सन्तुलन क़ायम न कर पाने के कारण पाश्चात्य सभ्यता और अन्य सभ्यताएँ साफ़ तौर पर असफल रही हैं। उदाहरण के तौर पर पहले तलाक़ को एक बड़ी बुराई के रूप में देखा जाता था। यूरोप में तलाक़ पर प्रतिबन्ध था। भारत में तो स्त्री अपने पति की मृत्यु के बाद उसकी चिता में जलकर सती हो जाती थी लेकिन जीते जी अपने पति से अलग नहीं होती थी। वर्तमान दौर में इस प्रकार की स्थितियाँ बन गई हैं कि यूरोप और अमेरिका में तलाक़ किसी खेल तमाशे से अधिक नहीं रह गई है। भारत में इस तरह की स्थिति तो अभी नहीं आई है। लेकिन इस सम्भावना के आसार ज़रूर पैदा होने लगे हैं।

अल्लाह के आदेशों की अनदेखी ने मानवीय समाज को कहाँ लाकर खड़ा कर दिया है, ये कुछ ऐसे उदाहरण हैं जिनपर अवश्य विचार किया जाना चाहिए।

☆☆☆